भक्ति-कुसुमाञ्जलि

अर्थात्

भक्ति-रसामृत

धर्मदेव सिद्धान्तालंकार

विद्यावाचस्पति 'ध्रुव'

ओ३म्

भक्ति-कुसुमाञ्जलि

अथवा

भक्तिरसामृत

लेखक

धर्मदेव सिद्धान्तालंकार विद्यावाचस्पति 'ध्रुव'

प्रकाशक

शारदा-मन्दिर

१७ बारहखंभारोड, नई दिल्ली

प्रथम संस्करण

सं० १९९१

मूल्य ।।।)

प्रकाशक

शारदा-मन्दिर

१७ बारहखंभारोड,

नई दिल्ली ।

मुद्रक

चान्दमल चंडक

वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर.

* ओ३म् *

विषय-सूची

विषय-सूची

ओ३म्

समर्पण पत्र

[१]

तेरी सेवा में हे स्वामी !
यह कुसुमाञ्जलि लाया हूं ।
अङ्गीकार करोगे इसको,
इस आशा से आया हूं ।।

[२]

वर्ण नहीं है, गन्ध नहीं है,
कुसुमों का सुमनोहर ।
भाव देखकर पर अपनाना,
विनय यही, करुणाकर !

[३]

कविता मैं क्या जानूं, कविवर !
इसका दावा ज़रा नहीं ।
मौलिकता का या प्रतिभा का,
दावा मेरा ज़रा नहीं ।।

[४]

भक्ति भरे उद्गारों की यह,
है पर अञ्जलि मेरी।
इसे दया कर के अपनाना,
मातु दयामयि! मेरी॥

[५]

अर्पण तुझको क्या कर
सकता हूं, मैं हे जगदीश्वर!
तू अनन्त ऐश्वर्य्ययुक्त है,
गाते जिसको मुनिवर॥

[६]

पर मेरा चित तव चरणों में,
चिर से आकर्षित है
वही, सहित सारे जीवन के,
तुझको नित अर्पित है॥

[७]

भक्तजनों के आग्रह से यह,
गूंथी मैंने माला।
बिखरे जो थे कुसुम उन्हीं का,
बस, सञ्चय कर डाला॥

[८]

यही कामना सबके मन में,
बहे भक्ति की गङ्गा।
रहे सभी का चोला तेरे,
विमल रंग में रंगा॥

विनीत धर्मदेव,

लेखक के दो शब्द

मैं कवि नहीं हूं और न ऐसा होने का मेरा ज़रा भी दावा है, तथापि मंगल-मयी माता की दया से जो थोड़ी बहुत भक्ति-भावना मेरे हृदय में विद्यमान है, उसके उद्गारों को पुस्तिका में संगृहीत कर दिया है। ऋषि दयानन्द आदर्श भगवद्-भक्त थे। उन्होंने विशुद्ध रूप में भक्ति भागीरथी को प्रवाहित करने का प्रयत्न किया। हज़ारों देवीदेवताओं की पूजा और उनमें भक्ति के स्थान में उन्होंने एकेश्वर पूजा का पुनः प्रचार किया। इस पुस्तक में प्रकाशित भाव वैदिक सिद्धान्तानुकूल हैं। उनमें अतिशयोक्ति वा अन्ध-श्रद्धावर्द्धक बातों का समावेश नहीं किया गया जिससे वैदिक धर्मानुयायी भक्त-जनों के लिये आशा है यह संग्रह विशेष उपादेय सिद्ध होगा।

भक्ति के स्वरूप, परिणाम और लक्षणों को ठीक तौर पर समझने के लिये निम्नलिखित सूत्रों का नारद-भक्ति सूत्र से उद्धृत करना पर्याप्त है। नारदमुनि कहते हैं—

अथातो भक्तिं व्याख्यास्यामः।

अर्थात् हम अब भक्ति की व्याख्या करेंगे।

सा त्वस्मिन् परम प्रेम-रूपा, अमृतस्वरूपा च॥

परमात्मा में अत्यधिक प्रेम रखना ही भक्ति है जो अमृत के समान आनन्ददायिनी होती है।

यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवत्यमृतो भवति, तृप्तो भवति।

अर्थात् जिसे प्राप्त करके मनुष्य सिद्ध तृप्त और अमर हो जाता है।

यत्प्राप्य न किञ्चिद् वाञ्छति न शोचति न द्वेष्टि न रमते।
यज्ज्ञात्वा स्तब्धो भवति, मत्तो भवति, आत्मारामो भवति॥

जिसे पा कर मनुष्य इच्छा शोक द्वेष और आसक्ति से पार होजाता है, जिसके यथार्थ स्वरूप को जान कर पुरुष शांत हो मस्त और आत्मा में रमण करने वाला होजाता है, उसका लक्षण नारदमुनि ने इस प्रकार किया है—

तदर्पिताखिलाचारता तद्विस्मरणे परमव्याकुलतेति।

अर्थात् उस परमात्म-देव के प्रति अपने आपको सम्पूर्ण-तया अर्पित कर देना और उसका विस्मरण होने पर अत्यन्त व्याकुलता का अनुभव करना यह भक्ति का लक्षण है। इस पवित्र भक्ति-भावना का कर्मयोग के साथ किसी प्रकार का विरोध नहीं है बल्कि सच्चा भक्त ही आदर्श कर्मयोगी बन सकता है इसमें सन्देह नहीं। सच्चे भक्तों का योगिराज श्रीकृष्ण के भगवद्गीता में जो लक्षण बताया है वह भी इस प्रसंग में विशेष रूप से मनन करने योग्य है। उन्होंने गीता के १२ वें अध्याय में बताया है।

अद्वेष्टा सर्व-भूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहङ्कारः सम दुःख सुख क्षमी॥
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्ष भयोद्वेगे मुक्तो यः स च मे प्रियः॥

इत्यादि श्लोकों का तात्पर्य यह है कि सच्चा भक्त वही है, जो किसी प्राणी से द्वेष नहीं करता, जो सबको मित्र की दृष्टि से देखता है, जो दीन दलितों पर दया करता है, जो ममता और अहङ्कार (लोभ और अभिमान) से रहित है, जो दुःख और सुख में समान रहता है, जो अपराधियों को क्षमा करता है, जिससे लोग व्यर्थ भयभीत नहीं होते और जो लोगों से नहीं

डरता, बहुत अधिक हर्ष, क्रोध, भय और घबराहट से जो रहित है, वह सच्चा भक्त ही भगवान् का प्रिय होता है। ऐसे आदर्श-भक्त कर्मयोगियों की संख्या आर्यसमाज में दिन प्रति-दिन बढ़ती जाए यही मेरी हार्दिक कामना है। इसी उद्देश्य से अनेक भक्त-जनों के अनुरोध से यह संग्रह प्रकाशित कराया जारहा है। ईश्वर कृपा करें कि मेरी यह पवित्र कामना पूर्ण हो।

धर्मदेव वि० वा०

प्रकाशक का वक्तव्य

भक्ति क्या है ? भक्त किसको कहना चाहिये ? ये प्रश्न पूछने में जितने सहल हैं उतने उत्तर देने में सहल नहीं। गाढ़ प्रेम तथा अपूर्व अनुराग भक्ति का सार है, जिन व्यक्तियों क हृदय में इन भावों का उदय नहीं हुआ उनको भक्ति का स्वरूप समझाना कठिन प्रतीत होता है। जिनके भीतर इन भावों का उदय हो चुका है वे अवश्य भक्ति-रस का आस्वादन कर सकते हैं।

ईश्वर के प्रति गाढ़ प्रेम को ईश्वर-भक्ति कहते हैं। यूँ तो प्रेम जड़, चेतन सभी वस्तुओं के प्रति दिखाया जा सकता है, परन्तु भक्ति अधिकांश चेतन पदार्थों के प्रति ही प्रकट की जा सकती है। चेतन पदार्थों को दृष्टि में रखते हुए हम मातृ-भक्ति, पितृ-भक्ति तथा गुरु-भक्ति इत्यादि भक्ति के स्वरूपों का भेद

करते हैं। देश-भक्ति भी वस्तुतः देश निवासियों के प्रति प्रेम प्रदर्शित करने का नाम है।

संसार के इष्ट-मित्र सब प्रेम के पात्र बनते हैं। इन सबके प्रति मनुष्य प्रेम दिखाता है, परन्तु इनसे परे और आगे भी एक अदृष्ट सत्ता है जिसके प्रति मनुष्य प्रेम प्रकट करता है। वह सत्ता यद्यपि इन्द्रिय-गोचर नहीं परन्तु ज्ञान-गोचर अवश्य होती है। सन्तों और महात्माओं को वह सत्ता इस प्रकार अनुभव होने लगती है जैसे साधारण व्यक्तियों को अपनी तथा अन्य प्राणियों की सत्ता अनुभव होती है। इसी सत्ता को ईश्वरीय सत्ता कहते हैं।

ईश्वरीय सत्ता व्यापक सत्ता है। जब एक व्यक्ति उसे अपने जीवन का आधार मानने तथा समझने लगता है तब उसके हृदय में उसके प्रति प्रेम उत्पन्न होता है। इसी प्रेम को जब वह अगाध अथवा असीम स्वरूप को धारण कर लेता है तो लोक उसे भक्ति के नाम से पुकारते हैं। व्यापक ईश्वर के प्रति भक्त जन विश्वव्यापी प्रेम दिखाते हैं। सब प्राणी उन्हें ईश्वर में दीखते हैं और ईश्वर उन्हें सब प्राणियों में दिखाई देता है। इसी ज्ञान के आश्रय उनका विश्व-प्रेम निर्धारित रहता है।

प्रकाशक का वक्तव्य

भक्त के क्या लक्षण होने चाहियें? भक्त-जन किन चिह्नों द्वारा पहिचाने जाते हैं? यतः भक्त के जीवन का मूल मन्त्र प्रेम ही माना जाता है अतः उसकी सब से बड़ी पहिचान यह है कि वह प्रेमी सज्जन होगा। सब के प्रति उसकी प्रेम-धारा सदा प्रवाहित होती रहेगी। भक्त का प्रेम अपने और पराये में भेद नहीं करता। वह प्रेम देशकाल और वर्ण की सीमाओं को नहीं देखता। वह जाति, रूप, कुल, विद्या, जन्म, धन आदि की संकुचित परिधि में नहीं घूमता। भक्त का प्रेम सदा विश्व-व्यापी बना रहता है।

भक्त अपने स्वार्थ को परार्थ के अधीन रखता है। दूसरों के सुख में अपना सुख मानता है। अपने व्यवहार से दूसरों के सुख को सदा बढ़ाने में तत्पर रहता है।

भक्त के प्रेम और उसकी सेवा के भाव में कोई वैयक्तिक कामना नहीं रहती। वह सदा निष्काम भाव से प्रेरित होता है और निष्काम भाव से दूसरों की हित साधना करता है। उसे न ब्रह्मासन की कामना रहती है न इन्द्रासन की। सच्चा भक्त तो मोक्ष तक की परवाह नहीं करता। वह केवल भक्ति के स्वतः आनन्द को ही पर्याप्त समझता है। वह अपने ईश्वर इष्ट देव को इसलिये चाहता है कि वह उसको चाहता है। बस उसकी चाह की दूसरी राह नहीं है।

ओ३म्

भक्ति-कुसुमाञ्जलि

निरन्तर ध्यान

—:o:—

हे परमेश्वर यह तन मेरा,
नित तेरा ही ध्यान करे ।। ध्रुव ।।

[१]

कृपासिन्धु तू बन्धु हमारा,
तू ही प्रभु है मात पिता ।
क्यों न दयामय फिर मन मेरा,
निशिदिन तेरा गान करे ।।

[२]

देख लिया जग घूम-घूम कर,
सुख पाने की आशा से ।
कौन दयामय तुझे छोड़ कर,
शाश्वत सुख का दान करे ।।

[३]

नाथ न मुझको धन की ख़्वाहिश,
और नहीं कुछ चाह मुझे ।
व्याकुल चातक नाथ-दया-धन,
अमृत-जल का पान करे ॥

[४]

मन के मोहन नवरूपों को,
इस दुनियां के रङ्गों को ।
देख कभी यह भटक न जाये,
मन तेरा ही ध्यान करे ॥

[५]

तू है अजब खिलाड़ी तेरे,
साथ सदा यह खेल करे ।
पर इतना कर जिससे फिर यह,
नहीं क्लेश का भान करे ॥

[६]

सुख में दुख में जङ्गल में या,
राज-महल के बीच ।
स्मरण हरेक दशा में मेरा,
मन यह एक समान करे ॥

मंगलमयी माता

[१]

गोद में मङ्गलमयी,
माता मुझे बिठला सदा।
दुःख सारे दूर करके,
दिव्य-सुख दे सर्वदा ॥

[२]

है नहीं तेरे सरीखा,
कोई हितचिन्तक यहां।
तू दया की दृष्टि मुझ पर,
दिव्य है रखती सदा ॥

[३]

दिव्य बल आनन्द को,
मैं प्राप्त करना चाहता।
क्यों न फिर अपनी शरण में,
रात-दिन रखती सदा ॥

[४]

है नहीं अपवित्रता का,
लेश तक मुझमें कहीं।
क्यों न तेरे ध्यान में,
मैं फिर निरत होऊं सदा॥

[५]

शोक चिन्ताओ निकल जाओ,
मेरे दिल से अभी।
ख्याल मेरा क्योंकि रखती,
है जगज्जननी सदा॥

[६]

भागकर तेरी शरण में,
जब कभी आता हूं मैं।
क्लेश सब काफूर होते,
शान्तिमय पीता सुधा॥

[७]

छोड़कर तेरी शरण,
मुझको नहीं कुछ चाहिये।
और खुद पूरा करेगी,
होके खुश ख्वाहिश सदा॥

[८]

गोद तेरी से न बढ़कर,
कोई सुखदायी जगह।
पुत्र तेरा 'ध्रुव' वही,
बैठा रहे माता सदा॥

आत्म-समर्पण

[१]

सौंपता हूं हाथ में मैं,
नाथ तेरे यह शरीर ।
ले इसे अपनी शरण में,
और करदे कर्मवीर ।।

[२]

तू पिता माता हमारा,
तू दयामय बन्धु है ।
दूर कर अपनी दया से,
नाथ सारी मेरि पीर ।।

[३]

नाव तेरे नाम की ले,
मैं तरूं भवसिन्धु को ।
आंधियां चलती फिरें पर,
मैं नहीं होऊं अधीर ।।

[४]

मँगता तुझसे नहीं कुछ,
भक्ति-रस बस चाहता ।
कर पिता मुझको भी वैसा,
जैसे थे नारद कबीर ।।

[५]

मांगने से फ़ायदा क्या,
ऐ मेरे मालिक बता ?
जब विना मांगे दिये,
तूने मही पानी समीर ।।

[६]

सत्य विद्या के सहारे,
मैं तेरे दर्शन करूं ।
हंस की माफ़िक जगत् में,
छान डालूं क्षीर नीर ।।

[७]

चाहता 'ध्रुव' नाथ तुझमें,
मग्न होना इस तरह ।
जिस तरह निज लक्ष्य से,
मिल एक हो जाता है तीर ।।

आतुर भक्तों की प्रार्थना

[१]

कब दोगे तुम दर्शन स्वामी,
यह तो आज बता दो ?
प्यासे चातक की करुणाघन,
अब तो प्यास बुझा दो ।।

[२]

बिछुड़े हुये बहुत देर से,
हैं तुमसे हम स्वामी ।
अब तो अपने से मिलने की,
प्रभुजी आश बंधा दो ।।

[३]

क्षण भर देते हो तुम दर्शन,
कभी-कभी करुणाकर ।
अब तो मन-मन्दिर में अपनी,
प्रतिमा नाथ बिठा दो ।।

[४]

अन्धेरे में भटक रहे हैं,
पन्थ न हमको सूझे।
कर विद्या का दान दयामय,
तम को दूर भगा दो ॥

[५]

तड़पाते हो क्यों हमको मुख,
अपना नाथ छुपाकर।
हृदय-गुहा में आज हमारे,
आसन अचल जमा दो ॥

[६]

तेरा ही नित ध्यान करें हम,
निशि-दिन तव गुण गावें।
सब में तेरा रूप निहारें,
ऐसा नशा चढ़ा दो ॥

[७]

कैसा सुखदायक दिन होगा,
प्रभु जब दर्शन दोगे !
चिन्तारूपी घनमाला को,
अब तो परे हटा दो ॥

[८]

मङ्गलमय तुम देव हमारे,
क्लेश हमें फिर कैसे !
भक्ति-सुधा का अब तो हमको,
प्रभुजी पान करा दो ॥

अद्भुत मित्र

[१]

परमपिता सब के सुखदाता,
तेरि शरण हम आते हैं।
भक्ति भाव से दिल को भर कर,
सब तेरे गुण गाते हैं॥

[२]

नहीं हितैषी तुझ से बढ़ कर,
मंगलदाता मात पिता।
शरण चरण में पाकर तेरी,
दुःख भूल सब जाते हैं॥

[३]

लौकिक विषयों में फँस कर जब,
तुझ से मुख मुड़ जाता है।
खा कर जग की प्रबल थपेड़ें,
तुझे याद कर पाते हैं॥

[४]

सब्ज़-बाग़ यह जग के माली,
तू ने खूब लगाया है।
अन्त न तेरी महिमा का मुनि,
मुक्त जीव तक पाते हैं ॥

[५]

तू ने अजब खिलाड़ी जग में,
यह है कैसा खेल रचा!
जिसमें फँस जग के नर नारी,
तेरी सुध बिसराते हैं ॥

[६]

तू है अद्भुत मित्र हमारा,
सब लोकों का एक सहारा।
साथ सदा रहता पर तेरा,
हम दर्शन नहिं पाते हैं ॥

[७]

ज्ञानी तेरी नौका पर चढ़,
भवसागर तर जाते हैं।
अज्ञानी तुझ को बिसरा कर,
निशि-दिन गोते खाते हैं ॥

[८]

विद्या-दीपक हृदय-गुहा में,
धार्मिक लोग जलाते हैं।
अन्धकार को दूर भगा कर,
वे तुझ में रम जाते हैं ॥

[९]

तेरे ही हाथों में दे कर,
जीवन-नौका की पतवार।
होकर हम निश्चिन्त दयामय,
तुझ में चित्त लगाते हैं ॥

[१०]

तू है प्रभु जब मित्र हमारा,
फिर है कौन डराने हारा।
होकर निर्भय धर्ममार्ग में,
हम सब क़दम बढ़ाते हैं॥

तेरा हाथ

—:o:—

[१]

प्रभो दुःख दर्द तेरा हाथ,
कर सब दूर देता है ।
हटा कर विघ्न बाधाएं,
यही आराम देता है ।।

[२]

जहां से भी मुझे भय हो,
जहां पर कोई संशय हो ।
मिटा कर सारे सन्देहों को,
यह आनन्द देता है ।।

[३]

फँसा इस मोह माया में,
कभी घबराय जाता है ।
सहारा यह मुझे तब नाथ,
तेरा हाथ देता है ।।

[४]

अमंगल हो नहीं सकता,
कभी तव छत्र-छाया में।
यही विश्वास मुझको रात-
दिन यह हाथ देता है॥

[५]

कभी जो शोक चिन्ताएं,
मेरे दिल घर बनाती हैं।
भगा उनको सदा यह शान्ति,
तेरा हाथ देता है॥

[६]

न रक्षा की अपेक्षा है,
किसी भी और की उनको।
सहारा यह जिन्हें हे नाथ,
तेरा हाथ देता है॥

[७]

दिखाई हाथ दे तेरा,
मुझे हरएक जा स्वामी।
सहारा बेसहारों का,
यही नित नाथ देता है॥

हमारी कामना

[१]

देखना हम चाहते हैं,
नाथ तेरी शान को ।
प्राप्त करना चाहते हैं,
दिव्य तेरे ज्ञान को ॥

[२]

शान्ति मिलती है नहीं,
तव नाथ दर्शन के विना ।
कर रहे भरसक इसी से,
तेरि महिमा गान को ॥

[३]

है भटकता मन हमारा,
शान्ति यह पाता नहीं ।
चाहते लेना तुम्हीं से,
भक्ति भिक्षा दान को ॥

[४]

ध्यान तेरे में निरन्तर,
मग्न होना चाहते ।
क्या करेंगे नाथ पाकर,
हम विपुल धन धान्य को ?

[५]

जिस किसी से हम मिलें,
जिस भी तरफ़ फेरें नज़र ।
सब दिखावें नाथ मिलकर,
तेरी अद्भुत शान को ॥

[६]

देखकर सौन्दर्य तेरी,
याद हम करते रहें ।
बेफ़िकर फिरते रहें कर,
भक्तिरस के पान को ॥

[७]

सत्य विद्या का हृदय में,
नित हमारे वास हो ।
शीघ्र जिससे कर सकें हम,
शुद्ध तेरे ध्यान को ॥

[८]

देश-सेवा यज्ञ करने में,
निरन्तर रत रहें ।
धन्य जानें हम लगाकर,
धर्म में जी जान को ॥

आनन्द धारा

[१]

हे नाथ तू आनन्दमय,
आनन्द की धारा बहा।
आनन्द गङ्गा में पिता,
हमको नहाना नित सिखा॥

[२]

तेरी शरण में हम रहें,
हमको न चिन्ता और हो।
तू इस तरह शुभ भक्ति को,
सब के सरल दिल में जमा॥

[३]

तू है पिता माता सखा,
तू बन्धु करुणासिन्धु है।
यह भावना आनन्दमय!
उत्पन्न कर निर्भय बना॥

[४]

आपत्ति कितनी घोर हो,
तुझसे विमुख छिनभर न हों।
उल्लास से भरपूर कर,
तू शोक चिन्ता को भगा ॥

[५]

विश्वास तेरे नाम पर,
तो भी न विह्वलता गई।
तेरे लिये हम सब सहें,
तू छाप यों दिल पर लगा ॥

सर्वाधार

[१]

दयामय देव ! सुखदाता !
पिता तू ही हमारा है ।
तुझे प्रभु छोड़ कर जग में,
नहीं कोई सहारा है ॥

[२]

कृपाकर, हे कृपासागर !
हृदय में तू हमारे आ ।
प्रकाशक पाप-नाशक तू,
तुही सबका सहारा है ॥

[३]

अविद्या-क्लेश-बन्धन का,
पिता ! तू काटने हारा ।
हमारे पर दया कर दे,
तुम्ही ने विश्व धारा है ॥

[४]

न हमको चाह है यश की,
नहीं कुछ कामना धन की।
तुझे बस चाहते हैं हम,
न तेरे बिन गुज़ारा है ॥

[५]

दया का सिन्धु होकर भी,
न देगा गर शरण हमको।
तो जाएंगे कहां भगवन्!
तुही सब का सहारा है ॥

विरह-वेदना

[१]

दया करो प्रभु ! दया करो बस,
हमें न अब तरसाओ ।
सूख गया यह हृदय-सरोवर,
फिर इसको सरसाओ ॥

[२]

भटक भटक हैरान हो गये,
राह न हमने पाया ।
इस कंटीले जंगल में अब,
हमें न और घुमाओ ॥

[३]

बहुत हुई प्रभु आंख-मिचौनी,
बहुत हुई प्रभु लीला ।
देकर ज्ञान-दृष्टि अब सब का,
जीवन सफल बनाओ ॥

[४]
देश विदेश बहुतसे देखे,
घर अपना नहिं देखा ।
प्राणाधार ! दया कर के अब,
घर अपना दरसाओ ॥

[५]
मृग-तृष्णा सम इन विषयों की,
दिल से चाह मिटाकर ।
शान्तिमयी गोदी में माता !
नित हमको बिठलाओ ॥

[६]
प्रभु ! विद्या का पाय सहारा,
तम को दूर भगा दें ।
ज्योतिर्मय ! तुम अद्भुत अपना,
रूप हमें दिखलाओ ॥

[७]
सब के साथ नाथ ! रात दिन,
देखें हाथ तुम्हारा ।
हो जाएं लवलीन तुम्हीं में,
ऐसा रंग जमाओ ॥

[८]
तेरे विना न हमको कल है,
तेरे विना न बल है ।
भक्ति सुधारस वर्षि हमारे,
अन्दर ज्योति जगाओ ॥

[९]
प्राणेश्वर ! अब तेरि जुदाई,
सही न हमसे जाती है ।
आकर मंगलमूल ! हमारे,
दिल की पीर नसाओ ॥

तेरे विना

[१]

शून्य जीवन है निरर्थक,
नाथ ! यह तेरे विना ।
शान्ति यह शशशृंग सम है,
हे प्रभो ! तेरे विना ।।

[२]

देख दुनियां के खिलौने,
मुग्ध हो जाते हैं हम ।
बुद्धि पाकर जानते जब,
व्यर्थ तब तेरे विना ।।

[३]

पा लिया जिसने तुझे,
वो धन्य जग में होगया ।
जो न, तो श्री कीर्ति विद्या,
व्यर्थ सब तेरे विना ।।

[४]

भक्ति-रस से तृप्त होकर,
भक्त गाते बेफ़िकर ।
ठोकरें खाते हैं पग पग
पर इतर तेरे विना ॥

[५]

रोज़ आते हैं सहस्रों,
लोग दुनियां बाग़ में ।
सैर का आनन्द है,
कुछ भी नहीं तेरे विना ॥

[६]

मोह का पर्दा हटा दे,
तू दयामय ! कर दया ।
नेत्रहीनों की तरह हम,
फिर रहे तेरे विना ॥

[७]

दीखता चारों तरफ़ है,
घोर अन्धेरा उन्हें ।
जो विचरते हैं जगत् में,
दर्श के तेरे विना ॥

[८]

मोह माया जाल में हम,
वासना शत बद्ध हो ।
दीन हीनों की तरह,
मति हीन नर तेरे विना ॥

[९]

हम भिखारी हैं दया के,
और तेरी शान्ति के ।
है नहीं आराम पल भर,
भी हमें तेरे विना ॥

[१०]

कामना बस अब यही है,
नाथ ! पूरी कीजिये ।
खो न दें 'ध्रुव' रत्न यह,
अनमोल हम तेरे विना ॥

सफल जीवन

[१]

दिव्य-शान्ति आनन्द प्राप्त कर
जीवन सफल बनाएंगे,
सेवा में जनता की निशि-दिन
हम तत्पर हो जाएंगे ।

[२]

विद्याऽमृत का पान सदा कर
भय को दूर भगाएंगे,
अन्धकार से ज्योति-मार्ग की
ओर नित्य ही जाएंगे ।।

[३]

जगदीश्वर के ध्यान गान में
अपना चित्त लगाएंगे,
संसारी विषयों में मन को
कभी नहीं फंसाएंगे ।

[४]

कितनी घोर विपत् आ जाए
क्षण भर नहिं घबराएंगे,
मङ्गलमय जग-जननी की
नित गोद बैठ सुख पाएंगे ॥

[५]

मङ्गलमय का हाथ हमारा
संरक्षक नित ही होगा,
चिन्ता दुःख शोक इनका
वह नाशक निश्चित ही होगा ॥

[६]

सब जगहों में उसे देखते
उसे सहारा अपना मान,
प्रति घटना में ध्यान करेंगे
जग जननी का हम हर आन ॥

[७]

दयादृष्टि जननी की होगी
सब बन्धन कट जाएंगे,
माया-पाश टूट जाएगा
भेदभाव हट जाएंगे ॥

[८]

जहाँ जहाँ भी दृष्टि जायगी
वहीं नजर प्रभु आएगा,
विश्व स्वर्ग तब 'ध्रुव' हम सबके
लिये सदा बन जाएगा ॥

[९]

सत्य हमारा रक्षक होगा
सत्य हमारा होगा प्राण,
कौन डरा सकता हमको जब
करता सत्य हमारा त्राण !

[१०]

यही समझ कर निर्भय हो कर
सत्याग्रह का व्रत धर के,
दिव्य भक्ति रसपान करेंगे,
गुण गा गा-कर शंकर के ।।

तेरे हाथ में

—:o:—

[१]

पल पल नाथ !
मेरा तेरे हाथ में ।
इक इक सांस
लेऊँ तेरे साथ में ॥

[२]

तू सुनाम अभिराम,
शान्ति धाम है ।
अविराम चलूँ नाथ,
तेरे पाथ में ॥

[३]

भूल जाऊँ सुध बुध,
तन धन की ।
ध्यान गान धनी बनूँ,
तेरे साथ में ॥

[४]

चिन्ता शोक दुःख कैसे,
पास आ सकें ?
जब कि काल बीते नाथ,
तेरे साथ में ।।

[५]

ज्ञान ध्यान दान गान,
खान पान सब ।
मेरे प्राण ! हर आन,
तेरे साथ में ।।

[६]

शान्त दान्त सन्त सम,
भक्ति सक्त बन ।
रात दिन रहूँ लीन,
नाथ गाथ में ।।

[७]

ऐ अतुल्य बलशाली !
कला तुल्य मैं ।
तू घुमाले जैसे चाहे,
ले के हाथ में ।।

पागल

[१]

बनादे पागल मुझे दयामय !
विनय यही नित्य नाथ ! मेरी ।
भुलाके सुख-दुःख सभी जगत् के,
रहूं शरण में मैं देव तेरी ॥

[२]

देवेन्द्र ! अन्दर जो देखता हूं,
सुधा की धारायें बह रही हैं ।
उन्हीं में गोते लगा-लगा कर,
पवित्र काया करूं ये मेरी ॥

[३]

सुनाई देती जो सब जगह इक,
गम्भीर तेरी ध्वनि सदा है ।
कृपा करो मैं उसी से भरलूं,
दया के सागर सितार मेरी ॥

[४]

पहाड़ आफ़त का टूटता हो,
जो घोर तूफ़ान आरहा हो।
हँसूं और नाचूं मैं साथ तेरे,
बनादे ऐसी ये गति मेरी ॥

[५]

ये सूर्य तारे समुद्र सारे,
करें तुम्हारी तरफ़ इशारे।
मुनीश भी गा गाके हारे,
ज़बान मेरी ये तेरि चेरी ॥

[६]

समस्त सौन्दर्य सार संसार,
का तुम्हीं ने सुरेश धारा।
तेरे अमर-कर का पा सहारा,
प्रफुल्ल जीवन-लता हो मेरी ॥

[७]

तुम्हारी भक्ति में जो थे पागल,
वही जगत् को जगा गये हैं।
न जानें कब मेरे भाग जागेंगे,
जिससे आयेगी मेरी बारी ॥

[८]

जगत् को जो जेल है बताते,
हँसी मुझे मातु उन पै आती।
विचित्र लीला-स्थली यह तेरी,
यही सदा धारणा हो मेरी ॥

[९]

अनन्त आनन्दरूप तुम हो,
अनूप भूपों के भूप तुम हो।
तुम्हारी सित चांदनी उजेरी,
हरे इसे रात जो अन्धेरी ॥

[१०]

नहीं मुझे चाह कीर्ति धन की,
जगादे विद्या का दीप दिल में ।
मिटे अन्धेरा कुटी बने यह,
'ध्रुव' प्रभा पूर्ण शुद्ध मेरी ।।

मेरी चाह

[१]

नाथ ! तुझको छोड़ करके,
मैं नहीं कुछ चाहता ।
दे, दया कर, शीघ्र दर्शन,
बस यही अब चाहता ॥

[२]

बन्धनों को काट मेरे,
नाथ मङ्गल-मूल तू ।
दासता को दूर कर,
आज़ाद होना चाहता ॥

[३]

है अविद्या का पड़ा,
पर्दा प्रभो ! जो आंख पर।
मैं हटा उसको तेरे,
दर्शन करूं यह चाहता ॥

३

[४]

भक्ति-रस का स्वाद लेकर,
मोह माया छोड़ कर ।
ध्यान तेरे में निरन्तर,
लीन होना चाहता ॥

[५]

प्रेम का तेरा मधुर प्याला,
प्रभो, प्रिय पान कर ।
स्वार्थ संसारी भुलाकर,
मस्त होना चाहता ॥

[६]

शान्ति, बल, आनंद का मैं,
स्रोत तुझको जानकर ।
जोड़ तेरे साथ दिल को,
काम करना चाहता ॥

[७]

नाथ ! जीवन यज्ञमय,
अपना बनाकर रात-दिन ।
लोक-सेवा कार्य में मैं,
रत रहूं यह चाहता ॥

[८]

धीर धर्मात्मा धुरन्धर,
सज्जनों के संग से ।
सर्वथा निस्स्वार्थ सेवा,
नाथ करना चाहता ॥

[९]

है न जिनको पूछनेवाला,
कोई तेरे सिवा ।
मैं गले उनको लगालूं,
प्रेम से यह चाहता ॥

[१०]

रात-दिन तेरी अमर-
छइयां के नीचे बैठकर ।
देश-सेवा यज्ञ है 'ध्रुव',
देव ! करना चाहता ॥

भगवान् की लीला

[१]

तेरी लीला का दयामय !
अन्त मैं पाता नहीं ।
खेल का तेरी मुझे,
मतलब समझ आता नहीं ।।

[२]

मैं मुसाफ़िर फिर रहा हूं,
तेरे दर्शन के लिये ।
मञ्ज़िले-मक़सूद अब तक,
दृष्टि में आता नहीं ।।

[३]

तेरी बिजली की चमक से,
आगे मैं बढ़ता जभी ।
घन घटा के फिर सबब,
रास्ता नज़र आता नहीं ।।

[४]

ज्योति तेरी देखकर,
खुश-मस्त हो जाता कभी ।
छीन लेता क्यों उसे मुझसे,
समझ आता नहीं ।।

[५]

भक्त-वत्सल ! तू दया का,
सिन्धु है जगदीश्वर ।
मैं भटकता फिर रहा क्यों,
मार्ग दिखलाता नहीं ?

[६]

जानता हूं शान्तिदाता,
है न तुझको छोड़कर ।
पर भटकता चित्त मेरा,
शान्ति यह पाता नहीं ।।

[७]

हो चुकी लीला बहुत अब,
मार्ग तू जल्दी दिखा ।
क्यों हमारे पर दया का,
वारि बरसाता नहीं ।।

[८]

गोद में मङ्गलमयी-
मीठी मुझे अपनी सदा ।
क्यों सुधारस-वर्षिणी में,
देव ! बिठलाता नहीं ।।

[९]

चाहिये मुझको नहीं यश,
धान्य धन जन सम्पदा ।
कोई भी तेरे सिवा,
स्थिर, शान्ति सुखदाता नहीं ।।

[१०]

नाथ ! विद्याऽमृत पिला कर,
दुःख सारा दूर कर।
तेरे सा 'ध्रुव' का हितैषी,
और पिता माता नहीं ॥

तेरा नाम

[१]

अपने पवित्र नाम की
इस शुद्ध आग में ।
वाणी पवित्र नाथ कर
मेरी, सुराग में ।।

[२]

तेरा पवित्र नाम
मन की शान्ति में सदा—
मेरे रमण करे
दयामय देव सर्वदा ।।

[३]

मेरे शरीर पर
बजा दे वाद्य की तरह ।
संगीत जो कि शुद्ध हो
इस आग की तरह ।।

[४]

घने अनन्त अँधेरे
मेरे निशाकाश में।
तेरी अनूप नाम
तारा ज्योति टिमटिमे ॥

[५]

जागृत में मेरे माथे
पर हे नाथ ! लगादे।
अपनी रंगीली नाम-छाप
जो न मिट सके ॥

[६]

लिख नाम दे
मेरे दुनियायी प्रेम पर।
मानो लिखे हों आग से
चमकीले वे अक्षर ॥

[७]

मेरे तरुण दिल में
जमें जड़ तेरे नाम की।
फूले फले वल्ली सदा
यह तेरे नाम की ॥

[८]

तेरे पवित्र नाम का
आश्रय बनायगा।
यात्रा मधुर संगीत
मय जीवन होजायगा ॥

[९]

आयेगा अन्त का
समय उपहार रक्खूंगा।
तेरे ही नाम का सखे !
मैं हार रक्खूंगा ॥

तेरा ध्यान

[१]

शक्ति शान्ति आनन्दरूप,
हे भगवन् ! तेरा ध्यान धरूं।
शुद्ध नाम की पुण्य नदी में,
हे मङ्गलमय ! स्नान करूं ॥

[२]

तेरा दिव्य मनोहर कर,
जग-भर में मुझको नित दीखे।
उसे जानकर अपने ऊपर,
भक्ति भाव भर गान करूं ॥

[३]

तू है अनुपम जग का स्वामी,
सर्व सुखों का दाता है।
यही मान तुझको कर अर्पण,
यथाशक्ति मैं दान करूं ॥

[४]

बैठा, स्नेह-भरी गोदी में,
करुणामयि माता तेरी ।
अचल भक्ति के दिव्यामृत का,
मैं सुखपूर्वक पान करूं ।।

[५]

कोई काम करूं, पर मन में-
निशि-दिन तेरा ध्यान रहे ।
छत्रच्छाया में मैं तेरी,
कभी न भय का भान करूं ।।

[६]

त्याग भाव को मन में धरकर,
मातृ-भूमि की सेवा हो ।
मैं जिससे असहायों के,
वा दलितजनों के दुःख हरूं ।।

कब ?

[१]

शान्तिमूल हे मङ्गलमय ! तुम,
कहो यहां कब आओगे ?
इस नीरस सन्तप्त-हृदय को,
कब आकर सरसाओगे ?

[२]

व्याकुल तुम बिन हिय यह मेरा,
प्रियतम ! बिल्कुल सूख गया ।
दर्शन दिये बिना अब कब तक,
मुझको तुम तरसाओगे ?

[३]

सुख के दाता सर्वविधाता,
तुम्हीं पिता अरु माता हो ।
अमृत-मय गोदी में अपनी,
कब मुझको बिठलाओगे ?

[४]

चञ्चल चित यह इत-उत डोले,
चैन न इसको आवे।
दर्शन देकर कब सुखदायक
इसको शान्त बनाओगे ?

[५]

अन्धकारमय मन्दिर मेरा,
माता! सूखा पड़ा हुआ।
हे करुणामयि! कब इसको फिर,
तुम जग-मग कर जाओगे ?

हे आनन्दनिधान !

[१]

अमृतमय गोदी में अपनी,
दे नित मुझको स्थान ।
तू है मेरी जान ।।
हे आनन्दनिधान !

[२]

भटक २ कर जगभर में अब,
आया तेरा ध्यान ।
है छोड़ा अभिमान ।।
हे आनन्दनिधान !

[३]

देख लिया तुझ से नहिं बढ़कर,
कोई अन्य महान् ।
तू अनुपम गुणखान ।।
हे आनन्दनिधान !

[४]

मङ्गलमयि माता ! दे मुझको,
अचल भक्ति का दान ।
करा सुधा का पान ॥
हे आनन्दनिधान !

[५]

तेरि शरण में आकर होवे,
शाश्वत सुख का भाव ।
पाऊं सच्चा ज्ञान ॥
हे आनन्दनिधान !

[६]

होकर मस्त उड़ाऊं ऊंची,
ऊंची तेरी तान ।
हो केवल तव गान ॥
हे आनन्दनिधान !

[७]

प्रति रचना में, प्रति घटना में,
दीखे तेरी शान ।
तेरा दिव्य विधान ॥
हे आनन्दनिधान !

सच्चा भक्त

—:o:—

[१]

मुझको सच्चा भक्त बनादे,

भगवन्! सच्चा भक्त बना दे ।।

[२]

अपने शरणागत को शङ्कर,

शाश्वत-शान्ति प्राप्त करा दे ।

अन्धकारमय इस रजनी में,

मेरी जननि! ज्योति जगा दे ।।

[३]

लीला तेरी जान, जगत् की

प्रति घटना को देखूं ।

मेरा जीवन आनन्दामृत-

मय अति मधुर बना दे ।।

[४]

भय चिन्ता का काम नहीं,
रँग, भक्ति-रङ्ग से चोला ।
प्रेम-नशा मुझको निशि-वासर,
नित्यानन्द चढ़ा दे ।।

[५]

तुझको मात पिता अरु भ्राता,
सखा तुम्हें ही मानूं ।
प्रियतम ! अपनी गोदी में नित,
तू मुझको बिठला दे ।।

[६]

अर्पित तेरे चरणों में हो,
जीवन-माला मेरी ।
मुझको अपने मङ्गल-कर की,
केवल कला बना दे ।।

[७]

सब में व्यापक तुमको मानूं,
प्रेम करूं मैं सब से ।
दीन-दलितजन सेवा में नित,
मुझको निरत बना दे ।।

[८]

विद्या ज्योति जगा, मन-मन्दिर मेरा जगमग कर दे ।
'ध्रुव' को दर्शन दिव्य दयाकर, देकर धन्य बना दे ।।

धन्य माता

[१]

धन्य है तू धन्य, जननी !
धन्य जग की धारिणी ।
धन्य है करुणामयी तू,
सर्व जन सन्तारिणी ॥

[२]

सूर्य चन्द्र समुद्र तारे,
सारे तव यश गा रहे ।
सर्व शक्तिमती ! सदा तू,
पाप-ताप निवारिणी ॥

[३]

दे हमें आशीष ऐसा,
ध्यान नित तेरा धरें ।
भावना मन में यही हो,
तू सकल सुखकारिणी ॥

[४]

तेरी शरण में हम सदा,
निश्चिन्त विचरें रात-दिन ।
ऐसी स्व-भक्ति सुधा पिला,
भय-शोक चिन्ता हारिणी ।।

[५]

दुःख में सुख में सुमङ्गल,
शोक के भी काल में ।
एक-रस सुमिरें तुझे,
तू दुःखदल की दारिणी ।।

[६]

कर रही उपकार हम पर,
रात-दिन हरएक छिन ।
याद नित उनको करें,
जिनके लिये तेरे ऋणी ।।

मैय्या !

[१]

मैय्या ! हम हैं बालक तेरे,
हमको गोद बिठा ले ।
हमें क्षुधा है पीड़ित करती,
अपना दूध पिला दे ॥

[२]

दयामयी है मङ्गलकर्त्री,
स्नेह-मूर्ति तू, माता !
तेरे बालक बिलख रहे हैं,
उनको शान्ति दिला दे ॥

[३]

तुझको छोड़ कहां पर जाएं,
थके भटक कर दर-दर ।
अब तो हम पर करुणा करके,
चुपके हमें सुला दे ॥

[४]

भक्ति शक्ति नहिं कुछ भी हममें,
तेरा एक भरोसा ।
जननी! अब निराश नहिं करना,
अपना मुख दिखला दे ॥

[५]

खेलें तेरे साथ, हे माता!
आता बड़ा मज़ा है ।
लाड़ प्यार से पास बुलाकर,
अम्मां! हमें खिला दे ॥

[६]

तेरी आज्ञा नित मानेंगे,
प्यार सदा तू करती ।
वही करेंगे जो तू कहती,
बस, हमको अपना ले ॥

शून्य जीवन

[१]

तुम बिन सूना जीवन मेरा ।
हे अनूप ! आनन्दरूप ! कब होगा दर्शन तेरा ॥

[२]

कलपत हिय तुमसे मिलने को
चैन जरा नहिं पावे ।
दिव्य ज्योति से जगमग करदो,
छाया घोर अँधेरा ॥

[३]

मात पिता तुम, मित्र तुम्हीं हो,
जीवनधन हो मेरे ।
ज्ञानरूप ! तुम गुरु मेरे हो,
मैं अज्ञानी चेरा ॥

[४]

आओ अब नहिं देर लगाओ,
मुझको गोद बिठाओ ।
प्रेममयी जननी ! मैं भूखा—
हूं इक बालक तेरा ॥

[५]

मैं प्यासा हूं, तड़फ रहा हूं,
जान निकलती जाती ।
भक्ति-सुधा का पान करादो
जन्म सफल हो मेरा ॥

[६]

निशा घोर है, चोर घुसे हैं,
लूट रहे धन मेरा ।
हे मम प्रियतम ! कब आवोगे
होगा शुभ्र सवेरा ?

मोहन रूप

[१]

कैसा सुन्दर तेरा रूप !

तू है मोहन सब के मन का, है भूपों का भूप ।।

[२]

विविध रंग के कुसुम मनोहर
तेरे गुणगण गाते ।
तेरी तरफ़ इशारे करते,
तू जगदीश ! अनूप ।।

[३]

नाच उठे तव रचना को लख,
नाथ ! हृदय यह मेरा ।
तव महिमा का अन्त नहीं है
यद्यपि तू नीरूप ।।

[४]

छिन-छिन तेरी याद दिलाते
रवि शशि पर्वत तारे ।
वृक्षलताएं, पुष्प पत्र सब,
सुन्दर छाया, धूप ॥

[५]

भक्त-हृदय में विराजमान हो
आनन्दामृत देता ।
जिसको पीकर लखते सब में
वे तेरा ही रूप ॥

[६]

सूर्य-चन्द्र हैं लोचन तेरे
पृथिवी चरण समान ।
अन्तरिक्ष यह मध्यभाग है
नभ है मस्तक रूप ॥

आनन्दमयी माता

[१]

आनन्द है ! आनन्द है !!
आनन्द-वर्षा हो रही ।
देखो जिधर उस ओर ही
आनन्द-गङ्गा बह रही ।।

[२]

क्यों न हो जब पुत्र हम
आनन्दमयि माता के हैं ?
हैं अयोग्य परन्तु सुत तो
सर्व सुखदाता के हैं ।।

[३]

मङ्गलमयी माता का चिन्तन
हम करें निश्चिन्त हो ।
उसके सुपावन रूप का ही
ध्यान दिन अरु रात हो ।।

[४]

उसकी दया को छोड़कर
हम मांगते कुछ भी नहीं ।
उसकी सुखप्रद गोद ही
आश्रय हमारा हर कहीं ।।

[५]

जननी परम मङ्गलमयी,
कैसे अमङ्गल हो सके ?
है कौन खल संसार में
जो बाल बांका कर सके ?

[६]

उस प्रेम-मूर्ति दयामयी की
हर जगह लीला लखें ।
उसपर भरोसा हम अटल
पल-पल प्रबल निश्चल रखें ।।

[७]

आदेश हम उसका सुनें
कर्तव्य का पालन करें ।
उसको समर्पित पूर्णता से
नित्य तन मन धन करें ।।

[८]

साधन बनें उसके करों में
श्रेष्ठ पर-उपकार के ।
उसके बनें प्रिय पुत्र हम
'ध्रुव' गुणगणों को धार के ।।

अद्भुत रचना

[१]

अद्भुत तेरी रचना लख कर,
अपनी सुध विसराता हूँ।
विस्मय श्रद्धापूर्वक, तेरे
सम्मुख, सीस नवाता हूँ॥

[२]

इक इक फूल बुलाता मुझको
दौड़ दौड़ कर जाता हूँ।
पर उसका वर्णन करने को
नहीं शब्द मैं पाता हूँ॥

[३]

एक एक से बढ़ कर
सुन्दर दृश्य, सामने आते हैं।
अपनी सुषमा अरु सुगन्ध से
मेरा चित्त चुराते हैं॥

[४]

देखूँ देखूँ, फिर फिर देखूँ
हृदय तृप्त नहिं होता है,
'धन्य धन्य अद्भुत जग-माली'!
शब्द यही मुख कहता है।।

[५]

प्रतिमाएं तेरी अनन्त,
ये तेरी याद दिलाती हैं।
भूले भटके लोगों को बस,
तेरी तरफ़ लिवाती हैं।।

[६]

मैं तो उनको लख कर स्वामी!
अति स्तब्ध हो जाता हूँ।
नाच नाच कर, कूद कूद कर,
तव महिमा-गुण गाता हूँ।।

[७]

नहीं चाहता जी हटने को
बारम्बार विचार करूँ।
लौट लौट उन्मत्त सदृश मैं
उपवन मध्य विहार करूँ।।

[८]

रंग बिरंगे कुसुमों में,
बस तेरी शोभा दीख रही।
अनुभव ही का विषय शब्द में
किस प्रकार वह जाय कही?

[९]

यही कामना, मन उपवन में
ऐसे सुरभित सुमन लगा,
तमो राशि का नाश करे
जो ऐसी ज्ञान ज्योति जगा।।

[१०]

भक्ति कुसुम की फैले सुरभी
तब, सब तेरे भक्त बनें,
तव चरणों में, धर्म देश में,
निशिवासर अनुरक्त बनें ॥

हमारा सहारा

—— o ——

[१]

सहारा तुम्हारा हमें मातु प्यारा,
हमारा कोई और चारा नहीं ।
तुम्हीं हो पिता बन्धु रक्षक सहाई,
तुम्हें छोड़ कोई हमारा नहीं ।।

[२]

अनन्तोपकारों से हमको दबाया,
सदा आपदाओं से हमको बचाया ।
कृपादृष्टि करुणामयी जननि करना,
तुम्हारे सिवा कोइ अधारा नहीं ।।

[३]

तुम्हीं स्नेह की मूर्ति माता जगत की,
भलाई सदा सोचती हो भगत की ।
दयादृष्टि का पात्र हमको बनाना,
विना जिसके जग में गुज़ारा नहीं ॥

[४]

हमारा सदा ख्याल रखती तुम्हीं हो,
क्रिया सर्व-गत हो के लखती तुम्हीं हो ।
तुम्हें राधिका रात दिन जो कि जानें,
उन्होंने कभी धैर्य हारा नहीं ॥

ईश्वर की मानस-पूजा

(ऋग्वेद १०।१२१ का अनुवाद)

-:o:-

ओं हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

[१]

चमकीला यह सूर्य, सृष्टि के
पहले था, जिसके अन्दर ।
भूतों का वह स्वामी था, जो
व्याप रहा बाहर अन्दर ॥

[२]

इस पृथिवी का, धारण करने वाला देव, वही है एक ।
अन्तरिक्ष, आकाश आदि का, संचालक वह ही है एक ॥

[३]

भक्ति भेंट लेकर, उस प्रभु के
चरणों में, हम जाते हैं।
श्रद्धापूर्वक, सुखसागर के
आगे, सीस झुकाते हैं॥

ओं य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

[४]

आत्म-शक्ति का देने वाला,
बलदाता जो है इक देव।
जिसके गुण सब गाते हैं,
जिसकी आज्ञा पर चलते देव॥

[५]

जिसकी छाया में रहने से, मिलता अमृत का आनन्द।
जिससे परे हटाओ मन तो, मिट जाता है सब आनन्द॥

[६]

भक्ति भेंट लेकर, उस प्रभु के,
चरणों में, हम जाते हैं।
श्रद्धापूर्वक, सुखसागर के
आगे, सीस झुकाते हैं॥

ओं यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

[७]

जो परमेश्वर निज महिमा से,
है सब का इक ही स्वामी।
स्थावर जंगम जितने जग में,
सबका इक अन्तर्यामी॥

[८]

हैं जो मानवादि सब प्राणी, उनका वो ही मालिक है।
गाय आदि जो चौपाये हैं, उनका भी वह पालक है॥

[९]

भक्ति भेंट लेकर, उस प्रभु के,
चरणों में, हम जाते हैं।
श्रद्धापूर्वक, सुखसागर के,
आगे, सीस झुकाते हैं॥

ओं यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

[१०]

बर्फ़ानी ये ऊँचे पर्वत,
जिसकी महिमा गाते हैं।

ये समुद्र भी उछल उछल कर,
गुण जिसके बतलाते हैं ।।

[११]

चित्र विचित्र दिशाएं जिसकी, महिमा का करती हैं गान ।
दसों दिशाएं जिस विराट के, हैं बलशाली भुजा समान ।।

[१२]

भक्ति भेंट लेकर, उस प्रभु के,
चरणों में, हम जाते हैं ।
श्रद्धापूर्वक, सुखसागर के,
आगे, सीस झुकाते हैं ।।

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।

[१३]

सर्वव्यापक जिस प्रभु ने है,
किया जगत् का यों विस्तार ।
भूलोकादि सभी लोकों का,
है जिस प्रभु पर ही आधार ।।

[१४]

जो परमेश्वर मुक्ति तथा, परमोत्तम सुख का दाता है ।
अन्तरिक्ष में जिसकी आज्ञा, से बादल बरसाता है ।।

[१५]

भक्ति भेंट लेकर, उस प्रभु के,
चरणों में, हम जाते हैं।
श्रद्धापूर्वक, सुखसागर के,
आगे, सीस झुकाते हैं।।

ओं यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद् दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम्।
यो देवेष्वधिदेव एक आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

[१६]

जो प्रभु अपनी महिमा से है,
प्रकृति नियामक सर्वाधार।
जिसकी प्रभुता में करता है,
प्रकृति जगत् का यह विस्तार।।

[१७]

जितने भी हैं देव जगत् में, उन सब का वह स्वामी है।
पूज्य वही है एक, न कोई दूजा अन्तर्यामी है।।

[१८]

भक्ति भेंट लेकर, उस प्रभु के,
चरणों में, हम जाते हैं।
श्रद्धापूर्वक, सुखसागर के,
आगे, सीस झुकाते हैं।।

प्रिय ! आओ।

[१]

घोर अन्धेरा छाया हिय में,
ऐ मेरे प्रिय ! आओ।
ज्योतिर्मय ! करुणा के सागर !
तम को दूर भगाओ ॥

[२]

क्षुधा-पिपासा पीड़ित होकर,
निशि-दिन तड़प रहा हूं।
प्रभु ! भक्तों के वत्सल !
मेरी, आकर पीर नसाओ ॥

[३]

लुप्त हो रही हिय से मेरे,
अनुपम कान्ति तुम्हारी।
दयानिधे ! विद्या का दीपक,
दिल में आन जलाओ ॥

[४]

क्या तुमसे मैं दशा छिपाऊं,
अन्तर्यामी अपनी ।
विरहाकुल इस दिलमें आओ,
प्रिय! नहिं देर लगाओ ॥

[५]

बिछा वासना जाल मोहमय,
दिल में भीषण मेरे ।
फँसजाने से उसमें प्रभुजी,
मुझको सदा बचाओ ॥

[६]

दिव्य-शान्ति, आनन्द-क्रान्ति के,
तुम हो स्रोत, दयामय !
मेरा तन, मन, धन, सब अपने
चरणों में ले आओ ॥

[७]

अज्ञानावृत होकर अबतक,
दरश न तब कर पाया ।
कृपा करो इस भटके राही
को, अब राह दिखाओ ॥

[८]

हार चुका हूं खोजत बाहर,
सत्य शान्ति वा सुख को ।
देकर शरण चरण में जननी!
'ध्रुव' विश्राम कराओ ॥

ऋषि दयानन्दजी का महत्व और सन्देश

(दीपावलि के दिन निर्मित)

[१]

ऋषि के अद्भुत गुणगण का हम,
आओ मिलकर करें विचार ।
उनकी उत्तम शिक्षाओं को,
अपने जीवन में लें धार ॥

[२]

सारा वैभव जिसने त्यागा,
जिससे होवे पर-उपकार ।
उस योगी का स्मरण करें फिर,
करलें दलितों का उद्धार ॥

[३]

सत्य-निष्ठता उस योगी की,
कहो कहां पाई जाती ?
जिसने प्रकट करी सच्चाई,
निर्भय हो खोली छाती ॥

[४]

सच्चे शिव का पता लगाने,
जो बन-बन में भटका था।
कष्ट हज़ारों आये थे पर,
नहीं कहीं जो अटका था॥

[५]

उस ऋषिवर की निर्भयता की,
नहीं कहीं भी सीमा थी।
जिसने सारे जग के आगे,
गाई वैदिक महिमा थी॥

[६]

जो कुछ समझा सत्य उसे झट,
बेखटके था कह डाला।
जिसके कारण पिया ख़ुशी से,
उसने विष तक का प्याला॥

[७]

दयासिन्धु था वह ऋषि जैसे,
उसका नाम जताता है।
दीन-अनाथों की, गौवों की,
रक्षा वही कराता है॥

[८]

विष देनेवाले घातक को,
भी जिसने था क्षमा किया।
उसके जीवन की रक्षा हित,
धन का भी साहाय दिया॥

[९]

क्या ऐसी करुणा, पुरुषों में,
भाई! पाई जाती है?
ऐसों की गणना तो निश्चय,
देवों में ही आती है॥

[१०]

ऐसे देव महात्मा का ही,
आज हुआ उत्तम बलिदान ।
सत्य धर्म की शुभ वेदी पर,
किये समर्पण जिसने प्राण ।।

[११]

उसका अब सन्देश यही है,
मिल जाओ सब ही भाई ।
बिलकुल दूर करो आपस में,
जो है फूट समाई ।।

[१२]

एकेश्वर के पूजक होओ,
सभी सत्य को ग्रहण करो ।
वैदिक-शिक्षा पर चल करके,
सब उत्तम आचरण करो ।।

[१३]

छोड़ो रीति रिवाज बुरे,
जो बाल-विवाहादिक हैं ।
सबको उत्तम शिक्षा देदो,
जो कन्या बालक हैं ।।

[१४]

सदा स्वदेशी कपड़े पहिनों,
परदेशी का त्याग करो ।
बनें जहां तक देशी चीज़ों,
का ही तुम उपयोग करो ।।

[१५]

भारतमाता की सेवा में,
तन मन धन सब वारो ।
जो अछूत कहलाते उनको,
तुम सप्रेम उभारो ।।

[१६]

डर को दूर भगाकर सच्चे,
कर्मवीर बन जाओ।
जाति पाँति के क़िले गिराकर,
सच्चे आर्य कहाओ॥

[१७]

स्वतन्त्रता से बढ़कर जग में,
नहीं वस्तु है कोई।
उसको प्राप्त करो मिल कर के,
राष्ट्र धर्म है वह ही॥

[१८]

परदेशी उत्तम शासन भी,
नहिं स्वराज्य के सम है।
है स्वराज्य का प्रेम न जिसको,
वह नर अधमाधम है॥

[१९]

आर्यसभ्यता को अपनाओ,
जो अत्यन्तोत्तम है।
नक़ल करो पाश्चात्य सभ्यता,
की न जो कि विष सम है॥

[२०]

प्रेम सहित व्यवहार चलाओ,
सभी आर्य भाषा में।
जिससे भारतमाता प्रमुदित,
होवे नव आशा में॥

आत्म-संभाषण

[१]

अपने अन्दर ढूंढ ले,
दिव्य शान्ति का स्रोत ।
मङ्गलमय वह देव है,
जग में ओतप्रोत ।।

[२]

इधर उधर क्यों भटकता,
ऐ मेरे मन मूढ़ ।
शान्त ज़रा हो देख ले,
दिल के अन्दर गूढ़ ।।

[३]

विश्वनियन्ता है वही,
वही सर्व आधार ।
'ध्रुव' चिन्तन दिनरात कर,
उसका, जो करतार ।।

[४]

सुखी नहीं श्रीमन्त हैं,
भिक्षुक को सुख नाहिं ।
सुखी वही जिनके रहे,
हरि-चिन्तन मन माहिं ॥

[५]

वेद शास्त्र देखे सभी,
जाना ब्रह्म विचार ।
अनुभव जब तक ना लिया,
जीवन तक बेकार ॥

[६]

दयामयी माता करे,
तव चिन्ता दिन रात ।
क्या है फिर तेरे लिये,
'ध्रुव' चिन्ता की बात ॥

[७]

सुखी वही स्वाधीन जो,
सुख स्वराज्य बिन नाहिं ।
हासिल कर ले राज्य निज,
पहले तन के माहिं ॥

[८]

दर्शन करना ब्रह्म के,
जन्म-सिद्ध अधिकार ।
यदि उससे वंचित रहा,
जीव ! तुझे धिक्कार ॥

पुष्पों के प्रति

[१]

प्यारे पुष्पो ! मुझे बताओ,
कौन तुम्हें देता सुषमा ?
क्या तुम कोई दे सकते उस,
अद्भुत दाता की उपमा ?

[२]

सुन्दरता को देख तुम्हारी,
स्तब्ध मुग्ध हो जाता हूँ ।
शोक दुःख सन्ताप मुक्त हो,
तनकी सुधि बिसराता हूँ ॥

[३]

बतलाओ तो कौन तुम्हारे,
अन्दर बैठा हँसा रहा ?
कौन तुम्हारे में मनमोहन,
यह सुषमा है बसा रहा ?

[४]

कितनी अद्भुत होगी शोभा,
उसकी जो तुम्हरा आधार !
लेजाओ मुझको करुणा कर,
उसके अति रमणीयागार ।।

[५]

किसको खुश करने की खातिर,
तुमने है यह रूप धरा ?
मुझे बताओ सखा तुम्हारा,
कौन मनोहर कहो जरा ?

[६]

मैं भी उसका दर्शन करके,
जीवन धन्य बनाऊँगा ।
इन नेत्रों की, तृप्त हृदय की,
चिर की तृषा बुझाऊँगा ।।

[७]

तुम सुगन्ध से सुरभित करते,
आस पास के सब स्थल को।
हर्षोल्लास पूर्ण कर देते,
शोकातुर जन के दिल को ।।

[८]

यही चाहता, चित्त वाटिका
में गुण सुरभी भर जाए ।
जिससे मेरा जीवन, अन्यों का
हित कुछ तो कर जाए ।।

स्वर्गीय धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्दजी को श्रद्धाञ्जलि

[१]

ऐ पूज्य मेरे स्वामी !
क्या भेट मैं चढ़ाऊं ?
भगवन ! तुम्हीं बतादो,
कैसे तुम्हें रिझाऊं ?

[२]

उपकार जो किये थे,
मुझसे गिने न जाते ।
ऋण से दबा हूं उनके,
कैसे उऋण कहाऊं ?

[३]

जो कुछ भी बन सका हूं,
सब आपकी कृपा से ।
बदला मैं उस दया का,
कैसे कहो चुकाऊं ?

[४]

मङ्गल भरा तुम्हारा,
नित हाथ शीश रहता ।
आशीश थी तुम्हारी,
अब कैसे उसको पाऊं ?

[५]

दलितों के तुम सहारे,
तुम ने पतित उभारे ।
उस कार्य को तुम्हारे,
पा शक्ति मैं बढ़ाऊं ॥

[६]

त्यागी परोपकारी,
तुम दिव्य-देह धारी ।
मन में सदा तुम्हारी,
प्रतिमा, यते ! बिठाऊं ॥

[७]

वह दिव्य बल तुम्हारा,
दिल साफ़ जोशवाला ।
पाऊं कि जिससे मैं भी,
औरों के काम आऊं ॥

[८]

श्रद्धा का दिव्य मन्दिर,
यह मेरा दिल विमल हो ।
चल के तुम्हारे पथ में,
जीवन सफल बनाऊं ॥

[९]

बस कामना यही अब,
मैत्री में सब लगाऊं ।
फिर अन्त में तुम्हारी-सी
वीर मृत्यु पाऊं ॥

कुलमाता के चरणों में श्रद्धाञ्जलि

[१]

कुलमातः ! तेरे चरणों में
मैं श्रद्धाञ्जलि लाता हूँ ।
स्वीकृत करके आशिष देगी
ऐसी आस लगाता हूँ ।।

[२]

तू ने जो उपकार किये हैं
उनकी गणना कैसे हो ?
वे अनन्त हैं, उनकी बोधक
मेरी रचना कैसे हो ?

[३]

दीक्षा देकर धर्म देश का
प्रेम, मातु ! उत्पन्न किया ।
सदाचार के बल से जननी !
फिर तू ने सम्पन्न किया ।।

[४]

सेवा की जो लगन लगी है
सब तव शिक्षा का फल है।
सारे भय को दूर भगावे
तेरे नाम में यह बल है ॥

[५]

प्रान्त प्रान्त में विचरण करते
माता तेरी याद सदा ।
कर देती है हृदय प्रफुल्लित
वह वास्तव में दिव्य सुधा ॥

[६]

उसके सन्मुख निराशता का
है कोई भी स्थान नहीं ।
शक्ति मिले विपदाओं में भी
मुख होता है म्लान नहीं ॥

[७]

श्रद्धा मूलमन्त्र का जपते
देते सब को दिव्यानन्द ।
तेरी ही गोदी में हमको
मिले पूज्य श्री श्रद्धानन्द ॥

[८]

दिव्य भावना भर कर सबके
हृदयों को सन्तुष्ट किया ।
परम अनुग्रह कर के मन में
धर्म ज्योति को दीप्त किया ॥

[९]

विश्ववन्द्य उन धर्मवीर का
नाम लगा है तेरे साथ ।
उनका हम कुल पुत्रों पर
वह सदा रहेगा मंगल हाथ ॥

[१०]

धर्म-वेदि पर बल देकर वे
अमर धाम को पाय गये।
जननि! स्वर्णाक्षर में तेरा
निर्मल नाम लिखाय गये॥

[११]

उनकी छत्रच्छाया में था
हमने तुझ में वास किया।
नहीं भूमि पर दिव्य स्वर्ग में
हमने विद्याभ्यास किया॥

[१२]

योग्य तपस्वी शिक्षकगण से
धर्म कर्म शिक्षा पाई।
वही दीखती वास्तव में
अब अपनी पुण्य कमाई॥

[१३]

भागीरथी तीर सुमनोहर
रम्य हिमालय देश।
प्रकृति देवि के वे आह्लादिक,
खेद विदारक वेश॥

[१४]

नहीं कहीं भी ढूंढे मिलते,
माता तू अनुपम है।
तेरी गोदी पुण्यमयी है
इसमें ज़रा न भ्रम है॥

[१५]

सभावर्ग वा जन्मोत्सव के
वे अति सरला मोद।
अरण्य पर्वत की वे सैरें
गङ्गा में वैरी के मोद॥

[१६]

शिक्षकगण का प्रेम भरा
व्यवहार ये सन्मुख आते हैं।
तेरे चरणों में ये माता
मम मस्तक नमवाते हैं ॥

[१७]

तेरी रम्यवाटिका में था
कितने वर्ष विहार किया।
वह स्वर्गीय समय था
जिसमें, तेरे में संचार किया ॥

[१८]

श्रुति कुसुमों के मधुरस पीने का
मुझको सौभाग्य हुआ।
तेरी थी अनुकम्पा माता
वेद-विषय अनुराग हुआ ॥

[१९]

यही कामना अब है मन में
तेरा उज्ज्वल नाम करूँ।
जिससे सुरभित तव यश फैले
ऐसे ही मैं काम करूँ ॥

[२०]

आशीष पूज्य पिता की पाऊँ
दिव्यधाम जो राज रहे।
धर्म जाति पर अर्पित होऊँ
कुलमाता की लाज रहे ॥

श्री पूज्य स्वामी श्रद्धानन्दजी का सन्देश

[१]

सुनो सन्देश को, स्वामी
दिवंगत जो सुनाते हैं ।
करो आदेश वह पूरा
हमें वे जो बताते हैं ।।

[२]

यही इक सार्वभौमिकधर्म
वैदिक जो सनातन है ।
इसी पर प्राण दे देना
हमें अब वे सिखाते हैं ।।

[३]

भगादो जातिभेद अस्पृश्यता
के भूत को भाई ।
करो उद्धार उनका मिल
पतित जो भी कहाते हैं ।।

[४]

जिन्हें सर्वेश का आश्रय
न भय उनको कभी होता।
भरोसा देव पर यह ही
सफलता मन्त्र गाते हैं॥

[५]

मना बलिदान-दिन उनका
उन्हें दिलमें बिठाते हैं।
उन्हीं के दिव्य भावों को
हृदय में हम जमाते हैं॥

[६]

सुनिश्चित जानलो आनन्द है
श्रद्धा के धारण में।
यही श्री पूज्य श्रद्धानन्दजी
हमको जताते हैं॥

श्रीकृष्ण-जयन्ती

[१]

कृष्णमुरारे ! प्यारे मुरलीवाले !
फिर तू आजा ।
भारतवासीगण के दिल का
योगिराज ! तू आजा ।।

[२]

कर्मयोगिवर ! वीरशिरोमणि !
ध्यानी तत्वज्ञानी !
सम-विकास की प्रतिमा बनना
मोहन ! हमें सिखा जा ।।

[३]

राजनीति का पण्डित तुमसा
नहीं कहीं मिलता है ।
स्वतन्त्रता के समर-समय मे
सच्चा मार्ग दिखा जा ।।

[४]

स्वार्थरहित हो जनता के हित
अर्पित तन मन धन कर।
तू ने जो आदर्श दिखाया
उस पर हमें चला जा ॥

[५]

ब्राह्मण हो चण्डाल कुलज हो
सब में समता रखना।
भूले भटके निज भक्तों को
फिर यह पाठ पढ़ा जा ॥

[६]

झूंठे वैरागी भारत का
बेड़ा डुबा रहे हैं।
अनासक्ति वैराग्य बताकर
फिर से उसे बचा जा ॥

[७]

गोभक्षकगण की संख्या को
तेरे भक्त बढ़ाते।
अस्पृश्यता विमूढ़-भाव जो
उसमें, आन मिटा जा ॥

[८]

आत्मा अमर काट सकता है
शस्त्र न कोई उसको।
इस निर्भयता मूलमन्त्र से
दीक्षित हमें बना जा ॥

[९]

तेरी मुरली ऐक्य सङ्गठन
प्रेम-पाठ सिखलाती।
भेद भूत से ग्रस्तजनों को
आकर मित्र मिला जा ॥

[१०]

नारायण की सच्ची पूजा
पीड़ित-नर-सेवा है ।
'ध्रुव' पवित्र यह भाव सभी के
दिल में आज जमा जा ।।

महात्मा गांधी

[१]

जन्म दिवस है आज, महात्माजी
का, खुशी मनाते हैं ।
मन-मन्दिर में उनकी मोहन,
प्रतिमा आज बिठाते हैं ॥

[२]

भक्ति कुसुम लेकर सुरभित,
हम सप्रेम चढ़ाते हैं ।
उनके सन्मुख श्रद्धा से फिर,
अपना शीश झुकाते हैं ॥

[३]

पूर्ण अहिंसक, सत्य-व्रत धर
वर, वे वीर शिरोमणि हैं ।
उनके समान सारे जग में
नहिं, कोई भी नरमणि हैं ॥

[४]

क्यों फिर उनके अद्भुत गुणगण
का, नहिं हम सब गान करें ?
क्यों न महात्माजी का श्रद्धापूर्वक
दिलसे मान करें ?

[५]

पढ़ें महापुरुषों के जीवन
जो थे पर-उपकारी ।
जनता के हित अर्पित करदी,
जिन विभूति निज सारी ।।

[६]

किन्तु महात्मा गांधीजी का,
जीवन तो अनुपम है ।
आत्म-शक्ति का शुभ विकाश
वह उनका सर्वोत्तम है ।।

[७]

सत्याग्रह का शस्त्र चलाना,
पूर्ण अहिंसामय जो ।
किसने हमें सिखाया अद्भुत,
स्वतन्त्रता पाने को ?

[८]

किसके एक इशारे पर हैं,
उद्यत कट मरने को ?
भारतवासी देशभक्त सब,
सकल जेल भरने को ?

[९]

अनभिषिक्त सम्राट् कौन है,
भारतीय हृदयों का ?
पावन पतित जनों का तप से,
नेता है सदयों का ।।

[१०]

शत्रु-मित्र किसके गुणगण से,
सब मोहित हो जाते हैं ?
कौन महात्मा जिसके आगे,
सभी हार खा जाते हैं ?

[११]

कर दिखलाये किसने करतब,
जो न किसी ने किये थे ?
किसने अपने तन मन धन
जन, परहित सर्व दिये थे ?

[१२]

कहां दृष्टिगोचर होती है,
इतनी विनय सरलता ?
जादू की भी आकर्षकता,
निर्भयता तत्परता ॥

[१३]

है सौभाग्य मातृभूमि का,
ऐसे नरवर पाना ।
क्या फिर संभव स्वतन्त्रतामणि
से, वंचित रह जाना ?

[१४]

किन्तु एक का काम नहीं,
वह है मिल करके सबका ।
जन्म-सिद्ध अधिकार ध्येय हो,
वह स्वराज्य हम सबका ॥

[१५]

आवें हिन्दू मुसलिम भाई,
ईसाई मिल जावें ।
स्वतन्त्रता के हित आपस के,
सभी विरोध मिटावें ॥

[१६]

शुद्ध स्वदेशी का व्रत धारें,
अस्पृश्यता निवारें ।
मातृ-भूमि की सेवा के हित,
नित तन मन धन वारें ॥

[१७]

हिन्दी का अभ्यास करें सब,
जो कि राष्ट्र-भाषा है ।
जिससे भावों के मिलने की,
सब की शुभ आशा है ॥

[१८]

यह सन्देश महात्माजी के,
इनका हम सब श्रवण करें ।
उनके उत्तम उपदेशों को,
कार्यरूप में ग्रहण करें ॥

[१६

जन्म-दिवस को आज मनाने
का वास्तव उद्देश्य यही ।
यही भावना हृदयाङ्कित हो,
हो स्वतन्त्र यह पुण्य मही ॥

[२०]

मङ्गलमय से यही प्रार्थना,
गांधीजी नित जीवें ।
उनकी नायकता में हम सब,
स्वतन्त्रताऽमृत पीवें ॥

अस्पृश्यता निवारण

(पूज्य महात्मा गान्धीजी के २१ दिनों के उपवास की समाप्ति पर निर्मित)

[१]

आओ मिटा दो भाइयो,
अस्पृश्यता के पाप को।
दूर कर दो प्रेम से मिल,
हरिजनों के ताप को ॥

[२]

है नहीं अस्पृश्य कोई,
पुत्र सब भगवान् के।
तुम गले सबको लगाओ,
बन्धु अपना मान के ॥

[३]

पूज्यवर गान्धी महात्मा,
प्राण देने के लिये।
थे हुए तय्यार जिसके,
दूर करने के लिये ॥

[४]

हो ज़रा भी भक्ति उन पर,
कार्य में परिणत करो।
दूर कर अस्पृश्यता को,
देश को उन्नत करो॥

[५]

चाहते स्वातन्त्र्य हो,
रख बन्धुओं को बन्ध में।
है असंभव, सोचलो,
फिर कर्म फल सम्बन्ध में॥

[६]

उनके बन्धन काट दो,
तब बन्ध सब कट जाएंगे।
है नहीं सन्देह, तब स्वातन्त्र्य
सुख हम पाएंगे॥

[७]

प्रेम जो अपना दिखाना,
है सनातन धर्म का।
भावना समता रखो तब,
ज्ञान होगा मर्म का॥

[८]

धर्म का है नाश होता,
जा रहा इस मौढ्य से।
दूर अपने को करो,
अस्पृश्यता के कार्य से॥

[९]

आज से व्रत लो, सभी को
प्रेम में देखेंगे हम।
हरिजनों के कार्य में,
होंगे सदा आसक्त हम॥

[१०]

कार्य सेवा का करो,
भगवान् का सन्तोष हो ।
पूज्य गान्धीजी का मन,
सन्तुष्ट तब निर्दोष हो ॥

गायत्री मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो
देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

[१]

सर्वरक्षक ईश का हम,
ध्यान करते सर्वदा ।
प्राणरूप वही जगत् का,
दुःखनाशक है सदा ॥

[२]

हर जगह में व्याप्त है,
सर्वज्ञ वह भगवान है ।
पूर्ण जो आनन्दमय है,
दिव्य जिसकी शान है ॥

[३]

विश्व का कर्ता सनातन,
शान्त सुखदाता वही ।
शोक पातक की विनाशक,
जिसकी है महिमा कही ॥

[४]

श्रेष्ठ उसके तेज का,
चिन्तन करें दिन रात हम ।
बुद्धियों को हम सभों की,
शुद्ध करदे वह परम ॥

[५]

प्रेरणा उसकी मिले तब,
सर्व कर्म विशुद्ध हों ।
दिव्य जीवनयुक्त होकर,
हम सदा उद्बुद्ध हों ॥

आचमन मन्त्र

ओ३म् शन्नोदेवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
संयोरभिस्रवन्तु नः ॥

[१]

व्याप्त है सर्वत्र जो वह,
दिव्य माता शान्ति दे ।
कामनाएं पूर्ण करती,
शुद्ध जो वह कान्ति दे ॥

[२]

इष्ट सुख की प्राप्ति के हित,
शान्तिदायक हो हमें ।
भक्तिरस के पात्र के हित,
वह सहायक हो हमें ॥

[३]

शान्ति सुख की वृष्टि होवे,
सब जगह कल्याण हो ।
रोग-पातक दूर होवें,
दिव्य जननी ध्यान हो ॥

समर्पण मन्त्र

ओ३म् नमः शंभवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

[१]

शान्ति तथा सुखमूल दयामय को
प्रणाम हो बारम्बार ।
बाह्य आन्तरिक सुखदाता प्रभु को
प्रणाम हो बारम्बार ॥

[२]

मङ्गलरूप जगज्जननी को मैं प्रणाम नित करता हूं ।
व्यक्ति-समाज विश्व सारे में शान्ति याचना करता हूं ॥

मेरे प्रभु का प्रेमोपहार

[१]

विश्व ! तुझे जगदीश्वर का मैं,
प्रीत्युपहार समझता हूं ।
मंगलमय की मंगल मति का,
क्रीड़ागार समझता हूं ।।

[२]

कारागार समान बताते,
तुझको कई विचारक हैं ।
मैं तो अपने प्रभु का तुझ को,
मूर्ताकार समझता हूं ।।

[३]

घबरा कर तुझसे भगजाना,
यही भीरुता है इक पाप ।
तुझमें रह कर सुकृत कमाना,
जीवन-सार समझता हूं ।।

[४]

तुझे त्यागना मात्र मोक्ष का,
साधन कुछ बतलाते हैं।
भ्रान्त कल्पना मैं तो उसको,
तुच्छाधार समझता हूं॥

[५]

तेरे अद्भुत दृश्य मुझे सब,
प्रभु की याद दिलाते हैं।
भेंट उसी की तू, जिसको मैं,
सर्वाधार समझता हूं॥

[६]

मेरा प्रेमी खिला रहा है,
तुझमें ही मुझको दिन रात।
तुच्छ जानना इससे तुझको,
मिथ्याचार समझता हूं॥

[७]

केवल दुःखरूप मैं तुझको,
विश्व! बता कैसे मानूं।
दयामयी माता पर जब मैं,
तव आधार समझता हूं॥

[८]

तेरे रंग न विमुख करावें,
अपने प्रभु से कभी मुझे।
यही चाहता बस मैं दिल से,
यही रात दिन जपता हूं॥

यजु० अ० ४० का पद्यानुवाद

ईशा वास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥ १ ॥

[१]

व्यष्टि समष्टि रूप से सारे,
इस जग में जो कुछ है ।
सब ईश्वर से आच्छादित है,
शून्य नहीं उससे कुछ है ॥

[२]

त्यागभाव को मन में रखकर,
तुम इस जग का भोग करो ।
सब कुछ ईश्वर का है ऐसा,
मानो कभी न लोभ करो ॥

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥ २ ॥

[३]

करते हुए सदा शुभ कार्यों
को जीने की इच्छा कर ।
सौ वर्षों तक मैं जीऊँगा,
यही भावना मन में धर ।।

[४]

ऐसे ही निष्कामभाव से,
यदि तू कर्म करेगा ।
होगा लिप्त न कार्यों में नर,
सुख भी लाभ करेगा ।।

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः ।
ताँस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ।। ३ ।।

[५]

आत्मघातकी उन लोकों में
जाते हैं जो ज्योति विहीन ।
मर कर भी करते हैं आत्मिक,
अन्धकार में वे नित लीन ।।

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ।।४।।

[६]

कम्पनहीन, एक, मन से भी,
अधिक वेग से युक्त ।
इन्द्रियगण का विषय नहीं है,
व्यापक बन्धन-मुक्त ।।

[७]

वह स्थित होते हुए, सभी गति
मानों से बढ़ जाता है ।
उसमें कर्मों को अर्पण कर,
जीवन मोक्ष को पाता है ।।

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके ।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ।। ५ ।।

[८]

दूर समीप वही गति वर्जित,
सबही को गति देता है ।
योगिजनों को बाहर भीतर,
वही दिखाई देता है ॥

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्नेवानुपश्यति ।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न वि चिकित्सति ॥ ६ ॥

[९]

ईश्वर के आश्रित भूतों को,
सब भूतों में ईश्वर को ।
जो देखे फिर कोई संशय,
कभी न होता उस नर को ॥

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः ।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ॥ ७ ॥

[१०]

आत्मा ही को जब भूतों में,
अनुभव करने लगता है ।
एक भाव से तब ज्ञानी का,
मोह शोक सब भगता है ॥

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छा-
श्वतीभ्यः समाभ्यः ॥ ८ ॥

[११]

ज्ञानी प्राप्त करे उसको जो,
शुक्र शरीर विवर्जित है ।
व्रण नस नाड़ी रहित शुद्ध सब,
पापों से वह वर्जित है ।।

[१२]

मन का साक्षी सर्वव्यापक,
स्वयंसिद्ध सर्वज्ञ वही ।
प्रजामात्र के हित करता है,
नित्य नियम से सृष्टि वही ।।

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ संभूत्याᳬं रताः ।। ९ ।।

[१३]

वैयक्तिक उन्नति ही में रत,
अन्धकार को जाते हैं ।
केवल समाजवादी, उनसे
बढ़कर दुर्गति पाते हैं ।।

अन्यदेवाहुः संभवादन्यदाहुरसम्भवात् ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ।। १० ।।

[१४]

दोनों उन्नतियों का अद्भुत,
फल ऐसा बतलाते हैं ।
सदुपदेश जिनके मुख से हम,
अब तक सुनते आते हैं ।।

संभूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयꣳ सह ।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा संभूत्याऽमृतमश्नुते ॥ ११ ॥

[१५]

व्यक्ति समाज भाव दोनों को,
ज्ञानी साथ मिलाता है ।
व्यक्ति भाव से मृत्यु दूर कर,
मोक्ष इतर से पाता है ॥

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाꣳरताः ॥ १२ ॥

[१६]

अन्धकार को जाते हैं वे,
जो कर्मों में ही लवलीन ।
उनसे बुरी दशा उनकी जो,
पण्डितमानी कर्मविहीन ॥

अन्यदेवाहुर्विद्याया अन्यदाहुरविद्यायाः ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥ १३ ॥

[१७

विद्या का फल भिन्न कर्म के,
फल से वे बतलाते हैं ।
सदुपदेश जिनके मुख से हम,
अब तक सुनते आते हैं ॥

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयꣳ सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ॥ १४ ॥

[१८]

ज्ञान कर्म दोनों को ज्ञानी,
जग में साथ मिलाता है ।
कर्मों से अपमृत्यु दूर कर,
मोक्ष ज्ञान से पाता है ॥

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तꣳ शरीरम् ।
ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृतꣳ स्मर ॥ १५ ॥

[१९]

यह शरीर नश्वर, पर आत्मा
प्रेरक अमर अभौतिक है ।
जीव याद कर कर्मों को तू,
साथ उसे जो प्रभु इक है ॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥१७॥

[२०]

श्रेष्ठ मार्ग पर सदा चलाओ,
उन्नति के हित सब को ।
तेजोमय जो कर्म हमारे,
तुम्हीं जानते सब को ॥

[२१]

कुटिल पाप से युद्ध कराओ,
जिससे उन्हें भगावें ।
होकर शुद्ध सदा हम तेरा
करें ध्यान, गुण गावें ॥

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् ।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम् । ओ३म् खं ब्रह्म ॥१८॥

[२२]

हे परमेश्वर सच्चाई का,
मुख सोने मे आवृत है ।
उसको देख नहीं सकते हम,
फँसा स्वर्ण में यह चित है ॥

[२३]

बन्धन रहित ईश के अन्दर,
जो मैं पुरुष वही नित हूँ ।
सर्वव्यापक है ईश्वर तो मैं,
इन प्राणों में स्थित हूँ ॥

प्रार्थना

मेरे ईश्वर बिठा ले पास मुझे ।
तेरी चाहिये कृपा अब ख़ास मुझे ।।

[१]

और कुछ मांगू नहीं
हे पिता ! मैं तेरे से ।
अपनी ज्योति दे मुझे
दूर कर अंधेरे से ।।

तेरे नाम का हो अभ्यास मुझे ।
मेरे ईश्वर बिठा ले पास मुझे ।।

[२]

हो नहीं सकता कभी भी
दुखी यह मन मेरा।
सर मेरे पर हो यदि
करुणारूप कर तेरा ॥
तेरे पर हो अटल विश्वास मुझे।
मेरे ईश्वर बिठा ले पास मुझे ॥

[३]

तेरे दर्शन की दयाघन !
हो मेरे में लगन।
भूल करके सब कुछ, जाऊं
हो मैं तुझमें मगन ॥
रहे पापों से सदा त्रास मुझे।
मेरे ईश्वर बिठा ले पास मुझे ॥

मन के प्रति

भटक रहा रे क्यों मन मेरे !

[१]

शान्ति-स्रोत बहता है अन्दर,
दिव्य नित्य सुखदायी ।
क्यों न नहाता निशिदिन उसमें,
मूरख मन मेरे ।।

[२]

शक्ति नाश क्यों अपनी करता,
इधर उधर भटका कर ?
प्रभु में क्यों लवलीन न होता,
रे अबोध मन मेरे ।।

[३]

बाह्य विषय का चिन्तन करता,
जिसका नाश जरूरी ।
अविनाशी को क्यों नहिं भजता,
ज्ञान रहित मन मेरे ?

[४]

प्रभु ने शक्ति धरी है अन्दर,
दिव्य विलक्षण तेरे ।
हो क्यों शान्त बढ़ाता उसको,
नहिं चंचल मन मेरे ॥

[५]

चंचलता के कारण तेरे,
मारे क्लेश बढ़े हैं ।
भक्ति, सुधा को पी उनको
क्यों नहिं हरता मन मेरे ?

[६]

बनकर तेरा दास बहुत मैं,
अपनी शक्ति गँवाया ।
मेरे ही वश रहना होगा,
अब तो रे मन मेरे ॥